बिहार शोध समागम
BIHAR SHODH SAMAAGAM
Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 3, July-September, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971

''भारतीय प्राच्य भाषाओं में सुविचार एवं लोकमंगल की कामना एक अध्ययन''

ब्लासियुस पन्ना
सहायक प्राध्यापक (कुँड़ुख़) बी०एस० कॉलेज, लोहरदगा
राँची विश्वविद्यालय, राँची

सर्वप्रथम भाषा पर विचार करने से प्रश्न उठता है कि भाषा की उत्पत्ति कैसे हुई होगी? इस प्रश्न पर विचार प्राचीन काल से ही होते आ रहा है। इस विषय में विभिन्न भाषा वैज्ञानिकों का विभिन्न विचार मत है। कदाचित् इसकी उत्पति लाखों वर्ष पूर्व हुई। निश्चित रूप से भाषा का उद्भव और उसका अस्तित्व आदिम मानव सभ्यता के कालखण्ड से ही जुड़ा हुआ है, जो मानव सभ्यता के क्रमिक विकास के साथ आज तक निरंतर जारी है। चूँकि भाषा के बिना मानव सभ्यता निष्प्राण है। प्रकृति में वाणी ही ऐसा अमूल्य वरदान एवं धरोहर है, जो मनुष्य के जीवन को जीवंत, अलंकृत और चमत्कृत करने का कार्य किया है, इसके बिना मनुष्य का सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, शैक्षणिक, पारिवारिक जीवन अंधकारमय है।

प्राचीन काल से लेकर आज तक विकास का क्रम निरंतर जारी है, इसके पीछे किसी भाषा का अहम् योगदान होता है। भाषा का प्रयोग आमजन जीवन, पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, विज्ञान, तकनीकी जैसे हर क्षेत्र में होता है। विज्ञान एवं तकनीकी क्षेत्र में मानव सभ्यता जितनी विकास की ऊँचाइयों एवं गहराईयों में पहुँच पाया है उसमें भाषा एक महत्वपूर्ण कड़ी है। संसार में अनेकों भाषाएँ, बोलियाँ आदि है, इस संबंध में प्रचलित लोकोक्ति है– 'चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी' अर्थात् पानी का स्वाद हर चार कोस पर बदल जाती है और आठवें कोस पर कोई भाषा बदल जाती है। याने भाषा की ध्वनि, उच्चारण, शब्द प्रयोग आदि विभिन्न वातावरण, परिवेश, भौगोलिक परिवर्तन, भाषायिक, सांस्कृतिक परिवर्तन के कारण बदलती रहती है। नए स्वरूप एवं आकार ग्रहण करते हुए अन्तः स्वतंत्र अस्तित्व एवं विशेषताओं के साथ स्थापित होती है।

पारंपारिक बौद्धिक ज्ञान एवं सांस्कृतिक रूप से भारत देश का गौरव शाली इतिहास रहा है। इस मामले में आज भी विश्व गुरू के रूप में भारत देश की एक अलग पहचान कायम है इसके पीछे भारत की प्राचीनतम् भाषाएँ है, जो ना केवल लोगों की भावनाओं की अभिव्यक्ति है, वरण इसमें भारतीय समाज की राजनीति, समाज, इतिहास, भूगोल, धर्मदर्शन, लोक कला, ज्ञान, विज्ञान, सांख्य, लोकाचार, संस्कृति एवं सम्पूर्ण जीवन दर्शन निहित है। सर्वविदित है कि भारत विविध भाषाओं वाला विशाल देश है। जिसमें संस्कृत भारोपीय भाषा–परिवार की प्रमुख भाषाओं में से एक है। पुरातन भारतीय आर्य भाषा के अन्तर्गत वैदिक तथा लौकिक संस्कृत का विकाश हुआ है। एक समय संस्कृत शिष्ट भाषा साहित्य रचना सहित आम बोलचाल का भी माध्यम हुआ करती थी। परन्तु पाणिनी ने अष्टाध्यायी की रचना कर संस्कृत भाषा को शिष्ट व्याकरण के नियमों से प्रतिबंधित कर दिया और अपने समय में इसे शिष्ट और सभ्रांत समाज विशेष के लोगों का परस्पर विचार–विनियम की भाषा बना दिया गया।

अध्ययन के दृष्टिकोण से प्राचीन भारतीय आर्य भाषा को मुख्य रूप से तीन भागों में बांटा जा सकता है– ;पद्ध प्राचीन काल ;पपद्ध मध्यकाल एवं ;पपपद्ध आधुनिक भारतीय भाषाएँ।

प्राचीन भारतीय आर्य भाषाओं का काल 2500 ई० पूर्व से 500 ई० पूर्व तक माना जाता है। वहीं कुछ भाषा वैज्ञानिक और इतिहासकार प्राचीन आर्य भाषा समूह के कालक्रम को निम्नांकित तीन अवस्थाओं में बांटते है।

1) प्राचीन भारतीय आर्य भाषा (1500 ई० पूर्व – 500 ई०)
2) मध्य भारतीय आर्य भाषा (500 ई० पूर्व से 1000 तक)
3) आधुनिक भारतीय आर्य भाषा (1000 ईसा से लेकर आज तक)

पुरातन भारतीय आर्य भाषा के अन्तर्गत संस्कृत है। इसे वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत के रूप में है इसे वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत के रूप में रखा जाता है। वैदिक भाषा से ही लौकिक संस्कृत का विकास हुआ है। जैसा कि हेमचन्द्र ने कहा–'प्रकृति : संस्कृतम्। तत्र भवं ततः आगतं वा प्राकृतम्।' अर्थात् संस्कृत मूल है और उससे जो उत्पन्न हुई वह प्राकृत है। शिष्ट और साहित्य की भाषा आगे चलकर जन सामान्य की भाषा के रूप में विकसित हुई, ताकि सर्वसाधारण लोग भी संस्कृत भाषा साहित्य में निहित उपदेश एवं कल्याणकारी भाव को समझ कर आत्मसात् कर सके।

इस प्रकार प्राचीन भारतीय आर्य भाषा का इतिहास न केवल हजारों वर्ष पुराना है बल्कि इसका गौरवशाली और आर्दश भाव का भी इतिहास रहा है। पुरातन काल में क्रमशः संस्कृत, प्राकृत, पालि, अपभ्रंस एवं आधुनिक हिन्दी भारतीय भाषा के रूप में फल–फूल रही है।

आद्य शंकराचार्य की उक्ति के अनुसारः– ''वाचः प्राकृत संस्कृतौ श्रुतिगिरो'' अर्थात् प्राकृत और संस्कृत दोनों भाषाएँ भारतीय विधा की संवाहिक है। इसके अतिरिक्त विदेशी शब्दों से धोतित तमिल भाषा का बाह्य इतिहास है। उदाहरण के लिए श्रत्म ''सद्गुण'' शब्द तमिल काव्य में नैतिक क्षेत्र से धार्मिक क्षेत्र की ओर जाता है, जहाँ इसका मूल अर्थ 'अच्छा चरित्र'' था जो बाद में धर्म से संबंधित सभी अच्छाइयों का वाचक बन गया।

द्रविड़ भाषा परिवार के अन्तर्गत कुँडुख़ भाषा में कुछ पंक्तियाँ द्रस्टव्य हैः–

सावन भादो चेंप मल पुंईयी
हरे आयो जिया कलपार'ई
हरे बबा जिया कलपार'ई
जिया दुखन सहओय
कया दुखन सहओय
राजीन कूल कीड़ा मल सहओय
बरा भईया मन्न–मास इदओत
बरा बहीन परता खाड़ बछाबओत
हरे भैया सावन भादो चेंप मल पुंइयी।

अर्थात्– सावन–भादो मास का समय है, लेकिन इस समय वर्षा नहीं होने के कारण अकाल हो गया जिससे मनुष्य को खाने पीने के लिए कोई अन्न धन नहीं है। इसका कारण प्रकृति का दोहन है, इसलिए भाइयो एवं बहनों चलिए पेड़ पौधे लगाते हैं, जंगल पहाड़ मिट्टी की सुरक्षा करते हैं ताकि समय पर वर्षा होगी और लोगों के लिए अन्न–धन पर्याप्त होगा।

कुँडुख़ एवं गोंडी भाषा शब्द (व्याकरण) पर दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट नजर आता है कि इन समुदायों में सभी सदस्यों का मान, सम्मान और आदर बराबर होता है। सभी के लिए सम्मानीय संबोधन शब्द व्यवहार होता है चाहे छोटे हो या बड़े। **जैस उदाहरण के लिए–**

हिन्दी में	कुँडुख़ में	गोंडी में
आप जल्दी आइए	**नीन** चाड़े बरा	**निमा** जटके वाम
तुम कैसे हो?	**नीन** एकासे रअदय/रअदी?	**निमा** बहुन मंती/मन्तोन?

कुँडुख़ गीत दृष्टव्य है–

हू पेल्लो का लगी रे
डहरेन्ती नन तरा काला लगी रे।
कला तो को छोटे किर्तःअर ओन्दरआ,
मनाबअर बुझाबअर ओन्दरआ रे।
तेताली गही झड़ेपो तमन कोड़े मलदव,
लबआ लवई अम्बके ननाा रे।''

नव विवाहित लड़की को पति के घर में सयंम के साथ संभल कर रहना पड़ता है, जब किसी बात को लेकर पत्नी नाराज होकर मयके जाने को हठ् करती है। ऐसे समय में अपने छोटे भाई को पत्नी को मनाने के लिए आग्रह करता हैं। अर्थात् गीत में संदेश यह है कि ऐसे समय पत्नी को मारने पीटने या डांटने से समस्या का हल नहीं होगा। बल्कि स्थिर मन से उसकी भावना को समझते हुए व्यवहार में आना पड़ता है।

माता–पिता के सम्मान में कुँडुख़ गीत में सुविचार देखा जा सकता है।

''अयो बबन अम्बा केबा भइरो,
आर नमन खरा खिलपत पोसचर।
बिड़ना बीरी बिड़ना मला बाचर,
चेंप बीरी चेंप मला बाचर
ओनका बीरी ओनका मला बाचर।''

अर्थात् इस कुँडुख गीत में बहुत ही मार्मिक और दिल की उद्गार भाव चित्र को देखा जा सकता है, कि किस प्रकार से एक माता–पिता बचपन से लेकर बढ़े होने तक अपने बच्चों को पालन–पोषण करते हैं, बच्चों के भविष्य को संवारने सजाने के लिए न जाने कितने त्याग और बलिदान देते हैं। दूसरों के घर में मजदूरी करते हैं धूप वर्षात् और ठंड में तनिक भी अपनी चिंता किए वगैर पूरी समर्पण और त्याग भाव से बच्चों को परवरिश करते हैं। इसलिए अपने माता–पिता को कभी डांट फटकार मारपीट नहीं करनी चाहिए बल्कि उनका सम्मान और आदर को हमेशा अपने हृदय में संजोकर रखनी चाहिए।

समस्त भाषा शास्त्रियों ने भारत की प्राचीनतम् लोकभाषा के रूप में बहुत प्राकृत, पाली, तमिल भाषा के अस्तित्व एवं महत्व को स्वीकारा है। प्राचीन भारत के कई शिलालेख प्राकृत भाषा में निबद्ध है। प्राकृत भाषा का बहुआयामी साहित्य भारतीय इतिहास, संस्कृत, कला, दर्शन, ज्ञान–विज्ञान की महत्वपूर्ण विरासत है। भगवान श्री महावीर एवं महात्मा बुद्ध जैसे युग पुरूषों ने भी अपने उपदेश प्राकृत भाषा, पाली जनभाषा में दिए ताकि अपने सुविचारों, शुभ कार्यों, उपलब्धियों को जनसामान्य तक पहुँचा सके।

प्राचीन भाषा साहित्य में लोक ज्ञान विज्ञान एवं अनुभव की अमूल्य निधि संचित है, साथ ही लोक साहित्य के विविध, बहुप्रयोग सर्वत्र प्राप्त होते हैं।

संस्कृत भाषा में एक श्लोक दृष्टव्य है–

''उद्यमेन हि सिहयन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्यं सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः।।

अर्थ है कि सिर्फ फल की इच्छा कामना करने मात्र से किसी व्यक्ति के काम पूरी नहीं हो जाते, बल्कि इसके लिए कर्म के साथ मेहनत भी यथोचित करनी पड़ती हैं। जिस प्रकार उक्त प्रसंग में बलशाली शेर के मुहँ में भी हिरण स्वयं नहीं आता। बल्कि अपने भोजन के लिए स्वयं परिश्रम करनी पड़ती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्राचीन भारत की इतिहास, महावीर सिंह त्यागी
2. उराँव समुदाय की कुँड़ुख़ एवं तमिल भाषा का अंतः संबंध, सम्पादक डॉ० रामचन्द्र राय
3. गोंडी पल्लो करियाट– लेखक आर०एन० बड़ी
4. कुँड़ुख़ भाषा और हिन्दी भाषा के क्रियाओं का प्रथम अध्याय–डॉ० हरि उराँव
5. कुँड़ुख़ लोक साहित्य, सम्पादक–डॉ० हरि उराँव, 2011 (प्रकाशक–झारखण्ड जनजीतय शोध संस्थान
6. तमिल भाषा का इतिहास– टी०पी० मीनाक्षीसुन्दरन, 1974
7. जनजातीय समाज साहित्य और संस्कृति– सम्पादक डॉ० हेमंत पं० धृतहरे।